

भारतीय दर्शन का परम लक्ष्य प्राणियों को त्रिविध दुःखों (आध्यात्मिक, आधिभौतिक एवं आधिदैविक) से ऐकान्तिक तथा आत्यन्तिक निवृत्ति कराना है। इसे ही शास्त्रों में मोक्ष, अपवर्ग, निःश्रेयस, कैवल्य, निर्वाण आदि पदों से अभिहित किया गया है।

विभिन्न दर्शनों द्वारा प्रोक्त तत्त्वों के यथार्थ अथवा सम्यक् ज्ञान द्वारा ही इसे प्राप्त किया जा सकता है। सांख्य एवं योग समान-तन्त्र हैं; यहाँ तत्त्वों के सम्यक् ज्ञान को 'विवेक-ख्याति' की संज्ञा दी गई है।

योग दर्शन में योगाङ्गानुष्ठान को कैवल्य का हेतु बताया गया है - "योगाङ्गानुष्ठानाद्-अशुद्धिर्ह्ये-ज्ञानदीप्तिरविवेकख्यातेः"। योगाङ्ग के अनुष्ठान से तात्पर्य है - ज्ञानमूलक कर्म का आचरण, अविद्या आदि के वश में कार्य न करना।

ज्ञानमूलक कर्म के आचरण से अज्ञानमूलक पञ्चक्लेश (अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश) क्षीण होते जाते हैं।



यम - नियम - आसन - प्राणायाम - प्रत्याहार - धारणा - ध्यान - समाधयोष्ठावङ्गानि ॥

1). यम - अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य तथा अपरिग्रह ये पाँच यम हैं -

“अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यापरिग्रहाः यमाः”

इनमें सर्वथा, सर्वदा सर्वभूतों के प्रति अनभिद्रोह ही अहिंसा है। सत्य आदि अन्य यम अहिंसामूलक हैं। श्रुति का भी कथन है - ‘मा हिंस्यात् सर्वभूतानि’।

सत्य यथाभूत अर्थयुक्त वाक्य और मन है; अर्थात् जिस प्रकार का दृष्ट, अनुमित अथवा श्रुत हुआ है, उसी प्रकार का कथन और चिन्तन सत्य है।

अस्तेय - स्तेय का अर्थ है अज्ञास्त्रपूर्वक दूसरे की वस्तु लेना। उसी का निषेध अस्तेय है।

ब्रह्मचर्य इन्द्रियों का संयम है।

अर्जन, रक्षण, क्षय, सङ्ग और हिंसा इन पाँच प्रकार के दोषों को देखकर विषयों का ग्रहण न करना ही अपरिग्रह है।

ये यम समूह जाति, देश, काल, समय से अनवच्छिन्न होकर सार्वभौम होने पर महाव्रत कहलाते हैं।

“जातिदेशकालसमयानवच्छिन्नाः सार्वभौमा महाव्रतम्”।

## नियम -

शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय तथा ईश्वरप्रणिधान ये नियम हैं - “शौचसन्तोषतपःस्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः” बाह्य एवं आभ्यन्तर (चित्तमल) मलों का प्रक्षालन ही शौच है। सन्निहित साधन से अधिक साधन के ग्रहण में इच्छाशून्यता ही सन्तोष है। इन्द्रसहन करना ही तप है; इन्द्र के उदाहरण हैं - शीत-उष्ण, क्षुधा-पिपासा, स्थान-आसन, काष्ठमौन-आकारमौन आदि। स्वाध्याय से तात्पर्य है - मोक्षपरक शास्त्रों का अध्ययन तथा प्रणव (ऊँकार) का जप। तथा ईश्वरप्रणिधान से तात्पर्य है - सभी कृत कर्मों को परमगुरु ईश्वर को अर्पित कर देना।

यम और नियम की प्रतिष्ठा का अर्थ है वितर्कसमूह की अप्रसवधर्मिता। इन यमनियमों की वितर्क द्वारा बाधा होने पर प्रतिपक्ष की भावना करनी चाहिए - ‘वितर्कबाधने प्रतिपक्षभावनम्’। यम और नियम में किसी एक के नष्ट होने पर सभी व्रत नष्ट हो जाते हैं -

ब्रह्मचर्यमहिंसा च क्षमा शौचं तपो दमः।  
सन्तोषः सत्यमास्तिक्यं प्रताड़नानि विशेषतः।  
एकेनाप्यथ हीनेन व्रतमस्य तु लुप्यते ॥

- कूर्मपुराण 2/11/69-70



### 3). आसनम् “स्थिरसुखमासनम्” ।

निश्चल और सुखावट उपवेशन ही आसन है। पद्मासन, वीरासन, भद्रासन, स्वस्तिकासन, वृण्डासन, सौपाग्रय, पर्यङ्क, क्रौञ्चनिषदन, हस्तिनिषदन, उष्ट्रनिषदन, समसंस्थान आदि स्थिरसुख होने से आसन कहे जाते हैं। सभी प्रकार के आसनों में मेरुदण्ड या रीढ़ को सीधा रखना चाहिए। श्रुति भी कहती है — “निरुन्नतं स्थाप्य समं शरीरम्” (श्वेताश्वतर 2/8)।

आसनसिद्धि अर्थात् शरीर की सम्यक् स्थिरता तथा सुखावटता प्रयत्नशैथिल्य और अनन्तसमाप्ति द्वारा होती है — “प्रयत्नशैथिल्यानन्तसमाप्तिश्चाम्”। प्रयत्न-शैथिल्य का अर्थ है — भाव के समान शरीर का निष्प्रयत्न-भाव।

आसनस्थैर्य के कारण शरीर शून्यवत् होने पर बोधशून्यता आ जाती है, जिसके फलस्वरूप आसनजयी योगी शीत-उष्ण, क्षुधा-पिपासा आदि द्वन्द्वों से अभिभूत नहीं होते हैं (‘ततो द्वन्द्वानभिद्यातः’)।

### 4). प्राणायामः

“तस्मिन्सति श्वासप्रश्वासयोगतिविच्छेदः प्राणायामः”।

आसनजय होने के अनन्तर श्वास-प्रश्वास का जो गतिविच्छेद किया जाता है, वही प्राणायाम है। वह प्राणायाम बाह्यवृत्ति, आभ्यन्तरवृत्ति और स्तम्भवृत्ति होता है। ये तीन फिर देहा, काल तथा संख्या द्वारा परिदृष्ट होकर दीर्घ और सूक्ष्म होते हैं — ‘बाह्याभ्यन्तरस्तम्भवृत्तिर्देशकालसंख्याभिः परिदृष्टो दीर्घसूक्ष्मः’।

## प्रत्याहारः

स्वविषय के साथ सम्प्रयोगाभाव (संयोगाभाव) होने पर चित्तस्वरूपानुकार के समान अर्थात् चित्तनिरोध होने पर निरुद्ध चित्त के समान निरुद्ध इन्द्रियगण भी अन्य प्रकार की इन्द्रियजय की तरह अन्य उपायों की अपेक्षा नहीं रखते। जिस प्रकार उड़ती हुई रानी मक्षिका के पीछे अन्य मक्षिकाएँ भी उड़ती हैं और उसके बैठने पर बैठ जाती हैं, उसी प्रकार इन्द्रियगण भी चित्तनिरुद्ध होने पर निरुद्ध हो जाते हैं, वही प्रत्याहार है—

“स्वविषयासम्प्रयोगे चित्तस्य स्वरूपानुकार इवेन्द्रियाणां प्रत्याहारः” ।

चित्त की एकाग्रता होने पर विषयों की और इन्द्रियों की जो अप्रवृत्ति है अर्थात् विषयसंयोग-शून्यता है, वही इन्द्रियजय है — “ततः परमा वश्यतेन्द्रियाणाम्।”